वेदों एवं उपनिषदों में निहित लोक-हितैषी शासन तत्त्वों का आधुनिक विकास में योगदान

प्रो.सत प्रकाश बंसल
कुलपति हिमाचल प्रदेश केन्द्रीय विश्वविद्यालय, धर्मशाला

प्रो.सुमन शर्मा
हिमाचल प्रदेश केन्द्रीय विश्वविद्यालय,धर्मशाला

प्रो.इन्द्रसिंह ठाकुर
हिमाचल प्रदेश केन्द्रीय विश्वविद्यालय ,धर्मशाला

शोध सार (Abstract):

यह शोध अध्ययन वेदों एवं उपनिषदों में निहित लोक-हितैषी शासन तत्त्वों के आधुनिक विकास में योगदान का विश्लेषण करता है। प्राचीन भारतीय दर्शन में शासन को केवल सत्ता का साधन नहीं, बल्कि जनकल्याण और धर्म पर आधारित एक नैतिक दायित्व माना गया है। वेदों में 'राजा' की भूमिका समाज के रक्षक, न्यायप्रदाता और धर्मपालक के रूप में चित्रित की गई है जबकि उपनिषदों में आत्मज्ञान, नैतिकता, और सार्वभौमिक कल्याण पर बल दिया गया है।

शोध का उद्देश्य इन शाश्वत सिद्धांतों की पहचान कर, आधुनिक शासन प्रणालियों विशेषतः भारतीय लोकतंत्र एवं संविधान में उनकी उपस्थिति और प्रभाव का मूल्यांकन करना है। यह गुणात्मक शोध है, जिसमें द्वितीयक स्रोतों जैसे प्राचीन ग्रंथों,समकालीन शोध आलेखों एवं संवैधानिक लेख्य के तुलनात्मक और विषयगत विश्लेषण का सहारा लिया गया है।

शोध से यह निष्कर्ष समक्ष आता है कि वेदों-उपनिषदों के लोक-हितैषी सिद्धांत आधुनिक लोकतंत्र के स्तम्भ न्याय, समानता, धर्मनिरपेक्षता और सामाजिक उत्तरदायित्व को गहराई प्रदान करते हैं। अनुशंसा की जाती है कि समकालीन नीतियों में इन सिद्धांतों की पुनर्व्याख्या और क्रियान्वयन से शासन अधिक नैतिक, पारदर्शी और जनोन्मुखी हो सकता है।

कुंजी शब्द (Keywords): वेद, उपनिषद्, लोक-हित, शासन सिद्धांत, आधुनिक विकास, भारतीय संविधान, लोककल्याण, नैतिक शासन

प्रस्तावना (Introduction):

वेद और उपनिषद् भारतीय ज्ञान परम्परा के कहें तो हिन्दू संस्कृति,धर्म और दर्शन मूल स्रोत हैं, जो न केवल आध्यात्मिक उन्नयन का मार्ग प्रशस्त करते हैं बल्कि सामाजिक, नैतिक और राजनीतिक जीवन के लिए भी दिशासूचक सिद्धांत प्रदान करते हैं। इन ग्रंथों में शासन को केवल अधिकार और सत्ता का प्रतीक नहीं अपितु जनकल्याण और धर्म-संगत जीवन का माध्यम माना गया है। वेदों में राजा को "जनस्य गोपा" अर्थात् प्रजा का रक्षक कहा गया है (ऋग्वेद 1.8.3 "त्वं नः पातः सुतपावन्नृणां त्वं जनस्य गोपा). जबकि उपनिषदों में शासक से आत्मज्ञान, संयम, सत्य और लोकहित की अपेक्षा की गई है । इसमें राजा जनक और ऋषि याज्ञवल्क्य के सम्वाद हैं। जनक एक ऐसे आदर्श शासक के रूप में प्रस्तुत होते हैं जो आत्मज्ञान की प्राप्ति के लिए प्रयासरत हैं।यह विमर्श दिखाता है कि एक शासक को केवल राज्य-प्रशासन ही नहीं अपितु आत्मा के स्वरूप, संयम और सत्य की समझ भी होनी चाहिए। यह विचार विशेष रूप से **बृहदारण्यक उपनिषद्, छांदोग्य उपनिषद्**, और **ईशावास्य उपनिषद्** में मिलता है इसमें राजा जनक और ऋषि याज्ञवल्क्य के सम्वाद हैं । जनक एक ऐसे आदर्श शासक के रूप में प्रस्तुत होते हैं जो आत्मज्ञान की प्राप्ति के लिए प्रयासरत्त हैं। यह संवाद दिखाता है कि एक शासक को केवल राज्य-प्रशासन ही नहीं अपितु आत्मा के स्वरूप, संयम और सत्य की समझ भी होनी चाहिए।**बृहदारण्यक उपनिषद** (अध्याय 1, ब्राह्मण 4 लोक-हितैषी शासन की यह परिकल्पना, जिसमें शासक स्वयं को 'सेवक' मानता है, भारतीय राजनीतिक चिंतन की विशेषता रही है। इस व्यवस्था में सत्ता का उद्देश्य केवल प्रशासन नहीं, बल्कि प्रजा के शारीरिक, बौद्धिक और आध्यात्मिक उत्थान को सुनिश्चित करना रहा है। तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्यस्विद्धनम्"(त्यागपूर्वक उपभोग करो और लोभ मत करो) यह शासकों के लिए एक नैतिक निर्देश है कि वे संयम और संतुलन के साथ राज्य संचालन करें।**ईशावास्य उपनिषद** समकालीन लोकतांत्रिक व्यवस्था में जहाँ एक ओर तकनीकी और संस्थागत विकास हुआ है, वहीं नैतिकता, उत्तरदायित्व और पारदर्शिता जैसी मूल्याधारित शासन की अवधारणाएँ पीछे छूटती प्रतीत होती हैं। ऐसी स्थिति में वेदों और उपनिषदों के शासकीय तत्त्वों का पुनर्मूल्यांकन और पुनर्प्रयोग अत्यंत आवश्यक हो गया है।

इस अध्ययन का उद्देश्य प्राचीन भारतीय ग्रंथों में निहित शासन तत्त्वों की पहचान कर, उनके आधुनिक लोकतांत्रिक व्यवस्थाओं विशेषतः भारतीय संविधान और शासन प्रणाली में योगदान को रेखांकित करना है । साथ ही यह शोध, नीति निर्माण में नैतिक और आध्यात्मिक मूल्यों की पुनर्स्थापना की आवश्यकता को रेखांकित करता है।

शोध उद्देश्य (Objectives)

- वेदों एवं उपनिषदों में वर्णित शासन तत्त्वों की पहचान करना।

- इन तत्त्वों के आधुनिक शासन में योगदान का विश्लेषण करना।
- समकालीन शासन में इन सिद्धांतों की प्रासंगिकता का मूल्यांकन करना।

साहित्य समीक्षा (Literature Review)

वेदों एवं उपनिषदों में निहित शासन के आदर्शों ने न केवल प्राचीन भारत की राजनीतिक चेतना को आकार दिया प्रत्युत आधुनिक भारतीय लोकतंत्र और संविधान की नींव को भी वैचारिक रूप से पोषित किया है। इस साहित्य समीक्षा में उन प्रमुख ग्रंथों, शोध-कार्य और विद्वानों के मतों का विश्लेषण किया गया है जिन्होंने इस विषय को गहराई से समझने का प्रयास किया है।

1. वेदों और उपनिषदों में शासन के आदर्शों पर पूर्व शोध कार्य

वेदों में शासन का आदर्श "धर्म" पर आधारित माना गया है। ऋग्वेद के कई मंत्रों में राजा को 'जनस्य गोपा' (जनता का रक्षक) कहा गया है, जो न केवल बाह्य सुरक्षा का नहीं आंतरिक नैतिकता का भी सम्वाहक होता है। इस सन्दर्भ को गतिमयता देते हुए कृपाशंकर सिंह विश्लेषण करते हैं कि वसिष्ठ ने ऋग्वेद के सातवें मंडल में दिवोदास और पुरुओं के मध्य युद्ध का उल्लेख किया है ..एक ऋचा में उन्होंने कहा है कि अग्नि जब सूर्य की तरह प्रतापी होकर प्रकाश पाते हैं ,उस समय वे अग्नि उन भरतों द्वारा प्रसिद्ध होते हैं ,जिन भरतों ने युद्धों में पुरुओं को पराजित किया है (ऋग्वेद 4.8.4)अथर्ववेद में 'राजसूय' यज्ञ द्वारा राजा को धर्म, न्याय और सत्य पर आधारित शासन की शपथ दिलाई जाती थी। उपनिषदों में शासक के लिए आत्मज्ञानी, निरहंकारी, संयमी और लोक-कल्याणकारी बनने की अपेक्षा की गई है।

हृदय नारायण दीक्षित ने अपने अध्ययन में माना है कि भारतीय शस्त्रीय परम्परा में विराट यथार्थ एक प्रीतिकर परिवार है ,पृथ्वी विश्व भौतिकी में एक इकाई है भारतीय संस्कृति में यह माता है आकाश भौतिकी में पिता है ,भारतीय संस्कृति में यह पिता है सूर्य भौतिकी में ऊर्जा का केन्द्र है ,भरतीय संस्कृति में पूज्य सविता है जीवनदाता है भरतीय संस्कृति में सम्पूर्ण सृष्टि जीवन्त रचना है (भारतीय संस्कृति की भूमिका 2008) ऐसी उदात सांस्कृतिक दृष्टि विश्व की किसी अन्य संस्कृति में दिखाई नहीं देती। उन्होंने यह भी माना कि धर्म-सम्मत और लोकहितैषी शासन की अवधारणा भारतीय संस्कृति की एक मौलिक देन है।

2. आधुनिक राजनीतिक दर्शन पर वेद-उपनिषदों का प्रभाव:

कई समकालीन राजनीतिक चिन्तक यह मानते हैं कि भारतीय लोकतंत्र का नैतिक आधार वेद-उपनिषदों की उस विचारधारा में निहित है जिसमें आदर्श को सर्व प्रमुख माना गया है जो समाज के समस्त वर्गों के कल्याण, न्याय, और आत्म-निर्भरता को प्राथमिकता देता है। भारतवर्ष की पुण्यभूमि के लिए महर्षि वाल्मीकि व्यक्तित्व गंगा के पवित्र जल की तरह अनेक लोकोपकारी मंगलों को करने वाला है जो

हमारे राष्ट्रीय आदर्शों के आदि विधाता हैं धर्म और सत्य रूपी महावृक्ष के जो अमर बीज वाल्मीकि ने बोये वे आज भी कहीं न कहीं आधुनिक राजनीतिक दर्शन में परिलक्षित होते हैं रामायण के प्रारंभ में ही उन्होंने कहा है कि जीवन में चरित्र से युक्त कौन है उनके लिए चरित्र और धर्म पर्यायवाची हैं अतएव उनकी दृष्टि में राम धर्म की प्रकट मूर्ति है ।राम शरीरधारी धर्म हैं ,मन वाणी और कर्म से राम जो भी चरित्र करते हैं उससे हमें धर्म की नवीन व्याख्या प्राप्त होती है । (कला और संस्कृति 2020)संविधान वेत्ताओं ने भी संविधान निर्माण के दौरान प्राचीन भारतीय न्याय और धर्म की अवधारणाओं का अध्ययन करके यह स्वीकार किया कि प्राचीन भारतीय ग्रंथों में शासन की नैतिकता पर बल मिलता है।

आचार्य विष्णुकान्त शास्त्री ने भी वेदांत और उपनिषदों की सामाजिक चेतना को आधुनिक शासन में लागू करने पर बल दिया । एक राज्य को कभी – कभी तीन प्रकार के तापों से गुजरना पड़ता है वे हैं आध्यात्मिक ,आधिभौतिक,आधिदैविक हमारी शास्त्रीय परम्परा में राम को भी उक्त तापों से होकर जीवन व्यतीत करना पड़ा । इसके लिए महात्मा तुलसी ने कहा कि दैहिक दैविक भौतिक तापा ,राम राज नहीं काहुंहि व्यापा (ज्ञान और कर्म 2001) उन्होंने माना है कि यह आधुनिक राजनीतिक सत्ता प्रतिभासित सत्ता है जिसका अनुभव प्रतिभास के द्वारा होता है उपनिषद् हमें यह पाथेय देता है कि पारमार्थिक सत्ता धर्मयुक्त सत्ता है जो शासन की आत्मा है ।

3. भारतीय संविधान एवं लोकतंत्र में प्राचीन विचारधारा का समावेश:

भारतीय संविधान की प्रस्तावना में उल्लिखित न्याय, स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व जैसे मूल्य वेद-उपनिषदों में वर्णित "धर्म", "ऋत", "सत्य" और "समत्व" जैसे सिद्धांतों की आधुनिक व्याख्याएँ हैं। वैदिक ऋषि प्रकृति की समस्त व्यवस्था और नियमावली को ऋत कहते हैं ,ऋत जैसा शब्द संसार की किसी भी भाषा में नहीं है ,ऋतुएं ऋत का स्वरूप है इस स्वरूप में प्रकृति के रूप है । ऋत समूची सृष्टि का संविधान है ।ऋत ऋग्वेद में ऋषियों की प्रीतिकर संज्ञा है , कहीं इसका तात्पर्य सत्य है ,कहीं सामान्य नियम ,कहीं आचार है कुल मिलाकर सम्पूर्ण सृष्टि का संविधान ।उपनिषद् में ऋषि प्रारम्भ में ही संकल्प लेते हैं ऋत बोलूँगा ,सत्य बोलूंगा , वैदिककाल में जो ऋत है वही लोक व्यवहार में रीति है। वैदिक ऋषियों ने पाया कि यह सृष्टि इसका प्रत्येक अणु परमाणु एक नियम से आबद्ध हैं उन्होंने सृष्टि की इस व्यवस्था को ऋत कहा ।पश्चिम के विद्वान इसे “ऑर्डर ऑफ नेचर” कहा ऋत सृष्टि का संविधान है सूर्य उगता है ,डूबता है ,चाँद खिलता है ,घटता है -बढ़ता है ,वनस्पतियाँ उगती हैं ,हरीतिमा खिलती हैं ,कलियाँ खिलती हैं फूल बीज बनते हैं बीज से वृक्ष अतः ऋत प्रकृति की लयबद्धता है ,रित सत्य है (संस्कृति की भूमिका 2008) धर्मनिरपेक्षता **(secularism),** जिसका मूल अर्थ है सभी धर्मों के प्रति समान दृष्टिकोण, उपनिषदों के "एकं सद्विप्रा बहुधा वदन्ति" (सत्य एक है, ज्ञानी उसे विभिन्न रूपों में कहते हैं) की भावना से प्रेरित प्रतीत होता है। जैसे ऋत प्रकृति का संविधान है वैसे ही धर्म भी प्रकृति और मनुष्य का संविधान है,प्रकृति ऋत से आबद्ध है यह प्रकृति का धर्म है ,जलना अग्निधर्म है,भिगोना जल धर्म है ,पृथ्वी की गतिशीलता भी धर्म है .पृथ्वी मधु वृष्टि करती है मधुरता उसका धर्म है ,मित्र का भी धर्म होता है उसी अनुरूप राज का भी धर्म होता है ,हमारे यहाँ कहा जाता है धर्म आधारित शासन व्यवस्था।

संस्कृति निष्ठ और कल्याणकारी राज्य की अवधारणा को भी वेद-उपनिषदों की उस चेतना से जोड़ा जा सकता है, जहाँ राज्य का उद्देश्य व्यक्तिगत भलाई नहीं, बल्कि सामूहिक कल्याण होता है।जिसके लिए सत्य का विधान बहुत आवश्यक है ,इसके लिए हमारे यहाँ उपनिषदों में कहा गया है "सत्य बोलो धर्म का आचरण करें" आगे चलकर पुराण काल में यह धर्म नारायण बना सत्यनारायण कथा इसका साक्षात् उदाहरण है यहाँ यह विश्लेषण किया जाता है कि ऋग्वेद में जो विराट है यजुर्वेद में वह आदित्य है उपनिषद् में वह ब्रह्म है और गीता में वह विश्वरूप है। पिछले शोध कार्यों एवं विद्वानों के विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि प्राचीन भारतीय ग्रंथों की शासन-नीति केवल ऐतिहासिक नहीं, बल्कि व्यावहारिक और नैतिक दृष्टि से आज भी अत्यंत प्रासंगिक है। आधुनिक लोकतांत्रिक प्रणाली में इन मूल्यों का पुनर्स्थापन शासन को अधिक उत्तरदायी, नैतिक और प्रजावत्सल बना सकता है।

शोध पद्धति (Research Methodology):

इस शोध में गुणात्मक **(Qualitative)** शोध पद्धति का प्रयोग किया गया है, जिसका उद्देश्य वेदों एवं उपनिषदों में निहित लोक-हितैषी शासन तत्त्वों की गहराई से विवेचना करना और उनके आधुनिक शासन प्रणाली पर प्रभाव का मूल्यांकन करना है। शोध की प्रकृति दार्शनिक, विश्लेषणात्मक एवं तुलनात्मक है।

1. शोध का प्रकार: गुणात्मक (Qualitative Research)

यह शोध मानवीय, सांस्कृतिक और दार्शनिक संदर्भों को समझने पर केंद्रित है। इसमें मात्रात्मक आँकड़ों की अपेक्षा विचारों, मूल्यों, और सैद्धांतिक विश्लेषण को प्राथमिकता दी गई है।

2. स्रोत: द्वितीयक स्रोतों का उपयोग

शोध में मुख्य रूप से द्वितीयक स्रोतों का उपयोग किया गया है, जिनमें निम्न शामिल हैं:

- प्राचीन ग्रंथ: ऋग्वेद, अथर्ववेद, बृहदारण्यक उपनिषद, छांदोग्य उपनिषद आदि
- शोध लेख एवं पुस्तकें: भारतीय राजनीतिक दर्शन, धर्मशास्त्र, कृपाशंकर सिंह ,वासुदेवशरण अग्रवाल ,चन्द्रधर शर्मा ,हृदय नारायण दीक्षित ,विष्णुकान्त शास्त्री हनुमानप्रसाद शुक्ल ,रामशरण शर्मा के ग्रन्थ
- संवैधानिक एवं सरकारी दस्तावेज: भारतीय संविधान, नीति-निर्माण से संबंधित दस्तावेज, लोकसभा/राज्यसभा के वाद-विवाद

3. विश्लेषण विधि: विषयगत एवं तुलनात्मक अध्ययन

विषयगत विश्लेषण (**Thematic Analysis** शोध में ग्रंथों से बार-बार प्रकट होने वाले नैतिक, दार्शनिक, और शासकीय तत्त्वों की पहचान की गई है । जैसे धर्म पर आधारित शासन, राजा का कर्तव्य, प्रजा के प्रति उत्तरदायित्व, सत्य और संयम की भूमिका आदि। इन विषयों को विभिन्न स्रोतों से संगृहीत कर उनकी अंतर्वस्तु का विश्लेषण किया गया।

तुलनात्मक अध्ययन (Comparative Study)

प्राचीन शासकीय आदर्शों की तुलना आधुनिक लोकतांत्रिक तत्त्वों से की गई। जैसे — वेदों में 'धर्म' आधारित शासन और आधुनिक संविधान में 'न्याय' आधारित शासन, उपनिषदों का आत्मज्ञान आधारित नेतृत्व और आज के उत्तरदायी जनप्रतिनिधि की अपेक्षाएँ।
यह शोध पद्धति न केवल शास्त्रों की व्याख्या करने में सक्षम है, बल्कि आधुनिक शासन प्रणालियों में उनकी उपयोगिता और प्रासंगिकता को भी ठोस रूप से प्रस्तुत करता है। विषयगत और तुलनात्मक दृष्टिकोण से यह शोध वर्तमान नीतिगत विमर्श में प्राचीन भारतीय बौद्धिक परंपरा का योगदान स्पष्ट करता है।

चर्चा (Discussion/Analysis):

इस खंड में वेदों और उपनिषदों में निहित शासन तत्त्वों का विश्लेषण करते हुए आधुनिक लोकतंत्र और भारतीय संविधान में उनके प्रभाव को रेखांकित किया गया है। साथ ही, समकालीन शासन-तंत्र में इन तत्त्वों की प्रासंगिकता और व्यवहारिक चुनौतियों की समीक्षा की गई है।

1. वेदों में वर्णित 'राजा' की भूमिका और लोक-कल्याण का आदर्श

वेदों में राजा को केवल शासनकर्ता नहीं, बल्कि प्रजा का रक्षक, धर्मपालक और न्यायदाता माना गया है। ऋग्वेद में राजा को "जनस्य गोपा" कहा गया है, जिसका अर्थ है—जनता का रक्षक। राजा की सफलता का मानदंड उसकी प्रजा की सुख-शांति, सुरक्षा और समृद्धि था, न कि उसकी सैन्य शक्ति या वैभव। अथर्ववेद में शासक को प्रजा के प्रति उत्तरदायी बताते हुए कहा गया है कि वह सभी वर्गों के कल्याण हेतु नीतियां बनाए और "सर्वे भवन्तु सुखिनः" की भावना से शासन करे। यह लोक-कल्याणकारी राज्य की अवधारणा आधुनिक कल्याणकारी राज्य (Welfare State) से मेल खाती है।

2. उपनिषदों में 'धर्म' आधारित शासन अवधारणा

उपनिषदों में शासन की अवधारणा को आध्यात्मिक दृष्टिकोण से देखा गया है। यहाँ *राजा* या *नेता* से अपेक्षा की गई है कि वह आत्मज्ञानी, सत्यनिष्ठ, निस्वार्थ और संयमी हो। बृहदारण्यक उपनिषद में उल्लेख मिलता है कि जब व्यक्ति आत्मा को जान लेता है, तभी वह सही अर्थों में दूसरों का नेतृत्व कर सकता है। उपनिषदों में 'धर्म' का अर्थ केवल धार्मिक क्रियाकलापों से नहीं, बल्कि सत्य, न्याय, करुणा और नैतिकता से है। इस दृष्टिकोण से शासन एक दैवी कर्तव्य बन जाता है, जो व्यक्ति की आत्मिक प्रगति के साथ-साथ समाज के संतुलित विकास को भी सुनिश्चित करता है।

3. आधुनिक लोकतंत्र में समानता, न्याय, और नैतिक नेतृत्व की अवधारणाएँ

आधुनिक लोकतांत्रिक प्रणाली, विशेषकर भारतीय संविधान, समानता, स्वतंत्रता, और न्याय जैसे तत्त्वों पर आधारित है। ये सभी अवधारणाएँ वेदों और उपनिषदों की मूल शिक्षाओं से प्रभावित हैं।

- समानता: उपनिषदों में 'अहम् ब्रह्मास्मि' और 'तत्त्वमसि' जैसे वाक्य मानव की अंतर्निहित एकता को प्रतिपादित करते हैं। यह विचार आधुनिक संविधान के समानता के अधिकार (अनुच्छेद 14) का दार्शनिक आधार बनता है।
- न्याय: वैदिक 'ऋत' (सत्य एवं प्राकृतिक नियम) की अवधारणा आधुनिक न्यायिक प्रणाली में न्याय की स्थायित्व और सार्वभौमिकता को दर्शाती है।
- नैतिक नेतृत्व: जहाँ आज नेतृत्व की नैतिकता पर प्रश्नचिन्ह उठते हैं, वहीं प्राचीन ग्रंथों में राजा को तपस्वी और सेवाभावी बताया गया है यह विचार गांधीजी के 'नेता एक सेवक हो' की भावना से मिलता-जुलता है।

4. भारतीय संविधान में वेदों-उपनिषदों के प्रभाव की पहचान

भारतीय संविधान की कई धाराएँ प्राचीन भारतीय शासन-संस्कृति से प्रभावित हैं:

- अनुच्छेद 14–18 (समानता का अधिकार): सभी नागरिकों को समान अवसर एवं अधिकार मिलना, वैदिक समता और उपनिषदों के ब्रह्मवाद पर आधारित है।
- अनुच्छेद 25–28 (धर्म-निरपेक्षता): सभी धर्मों के प्रति सम्मान की भावना, उपनिषदों की 'सर्वधर्म समभाव' की धारणा से मेल खाती है।
- अनुच्छेद 38–39 (समाजिक न्याय और कल्याण): राज्य की यह जिम्मेदारी कि वह समाज के कमजोर वर्गों की रक्षा करे, वैदिक-उपनिषदिक लोक-कल्याण के आदर्श से प्रेरित है।

5. आज के शासन तंत्र में इन सिद्धांतों की उपादेयता और चुनौतियाँ

उपादेयता (Utility):

- शासन में नैतिकता, पारदर्शिता और सेवा भावना को पुनर्स्थापित करने के लिए वेद-उपनिषदों के तत्त्व मार्गदर्शक बन सकते हैं।
- नीति-निर्माण में दीर्घकालिक दृष्टिकोण, लोक-कल्याण और सामाजिक समरसता जैसे मूल्य समकालीन संकटों का समाधान दे सकते हैं।
- प्रशासनिक नेतृत्व में संयम, त्याग और आत्मानुशासन को प्राथमिकता देने की प्रेरणा प्राचीन ग्रंथों से मिलती है।

चुनौतियाँ (Challenges):

- धर्म और राज्य की सीमाओं को आधुनिक लोकतंत्र में स्पष्ट बनाए रखना जिससे साम्प्रदायिकता से बचा जा सके।
- नैतिक मूल्यों की व्याख्या को समसामयिक संदर्भों में करना फलस्वरूप वे आदर्शवाद के स्तर पर ही न रह जाएँ अपितु व्यवहार में आ सकें।
- राजनीतिक इच्छाशक्ति की कमी और सामाजिक असमानताओं के कारण इन सिद्धांतों का पूर्ण रूप से क्रियान्वयन कठिन हो जाता है।

वेदों और उपनिषदों में निहित शासन तत्त्व न केवल भारतीय परम्परा की अमूल्य धरोहर हैं, बल्कि वे आधुनिक शासन को मानवीय, नैतिक और समावेशी बनाने की क्षमता भी रखते हैं। समकालीन शासन तंत्र में इनकी पुनःस्थापना से भारतीय लोकतंत्र अधिक सशक्त, उत्तरदायी और लोक-हितैषी बन सकता है। यह शोध वेदों एवं उपनिषदों में निहित लोक-हितैषी शासन तत्त्वों के विश्लेषण के माध्यम से यह सिद्ध करता है कि भारतीय दर्शन की यह परम्परा केवल प्राचीन सांस्कृतिक स्मृति नहीं अपितु आज भी शासन और समाज के संचालन में व्यावहारिक दिशा प्रदान कर सकती है। वेदों में 'राजा' को प्रजा का रक्षक, धर्म का पालक और न्याय का संवाहक बताया गया है, जबकि उपनिषदों में शासन की अवधारणा आत्म-ज्ञान, नैतिक नेतृत्व और सेवा पर आधारित है। इन ग्रंथों का मूल उद्देश्य सत्ता नहीं, बल्कि *कल्याण* है न केवल भौतिक प्रत्युत आत्मिक एवं सामाजिक है ।

- वेद-उपनिषद शासन को 'धर्म' के अधीन मानते हैं, जहाँ 'धर्म' का अर्थ न्याय, सत्य,कर्त्तव्य और समरसता से है।
- लोक-कल्याण, समानता, करुणा और उत्तरदायित्व जैसे तत्त्व आज के लोकतंत्र के मूल आधारों से साम्य रखते हैं।

- भारतीय संविधान के अनेक प्रावधान इन प्राचीन आदर्शों की आधुनिक व्याख्या हैं, जैसे – समानता, धर्म-निरपेक्षता, सामाजिक न्याय और राज्य की कल्याणकारी भूमिका।

आधुनिक समाज में अनिवार्यता:

आज जब वैश्विक स्तर पर शासन में नैतिकता का ह्रास, नागरिकों में अविश्वास, और सामाजिक विभाजन जैसी समस्याएँ बढ़ रही हैं, तब वेदों और उपनिषदों में निहित शासन-सिद्धांत अधिक प्रासंगिक हो उठते हैं। इन तत्त्वों की सहायता से ऐसा आधार प्रदान किया जा सकता है —

- शासन को अधिक नैतिक, उत्तरदायी और जन-केंद्रित बनाया जा सकता है।
- सामाजिक सद्भाव, समता और न्याय की दिशा में ठोस पहल सम्भव हो सकती है।
- नेतृत्व को केवल सत्ता का नहीं, सेवा का माध्यम माना जा सकता है।

भविष्य की सम्भावनाएं एवं सुझाव

1. नीति-निर्माण में भारतीय दृष्टिकोण का समावेश: शासन तंत्र और प्रशासनिक प्रशिक्षण में वेद-उपनिषद् आधारित लोक-कल्याणकारी तत्त्वों को सम्मिलित किया जाए।
2. शिक्षा प्रणाली में समावेशन: शिक्षा स्तर पर भारतीय दर्शन और उसके शासन तत्त्वों की समझ को बढ़ावा दिया जाए।
3. शोध और सम्वाद का विस्तार: विश्वविद्यालयों और नीति संस्थानों में इन तत्त्वों पर निरन्तर शोध, संगोष्ठियाँ और विमर्श आयोजित किए जाएं।
4. सांस्कृतिक नेतृत्व का प्रोत्साहन: ऐसे नेतृत्व को बढ़ावा दिया जाए जो सेवा, संयम और जनहित को प्राथमिकता देता हो जिसका ध्येय मात्र राजनीतिक लाभ के लिए न हो।

इस शोध से स्पष्ट होता है कि वेदों और उपनिषदों में निहित शासन के सिद्धांत न केवल ऐतिहासिक या धार्मिक महत्व रखते हैं बल्कि वे आज के लोकतांत्रिक शासन में नैतिक पुनर्जागरण का आधार बन सकते हैं। यदि इन तत्त्वों को समुचित रूप से समझकर समाहित किया जाए तो भारत ही नहीं पूरी मानवता के लिए एक समरस, न्यायपूर्ण और सह-अस्तित्व पर आधारित शासन की ओर अग्रसर हुआ जा सकता है।

सन्दर्भ -

1. आचार्य, शर्मा .पं. श्रीराम . (1998). वेदों में लोक कल्याण की कल्पना. हरिद्वार: अखण्ड ज्योति संस्थान।
2. विवेकानंद, स्वामी. (2004). उपनिषदों का संदेश. कोलकाता: रामकृष्ण मिशन।
3. राधाकृष्णन, डॉ. सर्वपल्ली. (1996). भारतीय दर्शन का इतिहास. दिल्ली: ओक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
4. अंबेडकर, डॉ. भीमराव. (1949). भारतीय संविधान सभा में भाषण. नई दिल्ली: भारत सरकार प्रकाशन।
5. अग्रवाल , वासुदेवशरण . (2023). भारत की मौलिक एकता . दिल्ली : अखिल भारतीय इतिहास संकलन योजना ।
6. शुक्ल, डॉ. राधेश्याम. (2012). वेदों में राज्य और समाज व्यवस्था. भोपाल: हिंदी ग्रंथ अकादमी।
7. मिश्र, डॉ. लक्ष्मीकांत. (2015). उपनिषदों का राजनीतिक चिन्तन. दिल्ली: भारतीय विद्या संस्थान।
8. वर्मा, डॉ. रामकुमार. (2010). धर्म और राजनीति का वैदिक स्वरूप. वाराणसी: साहित्य सदन।
9. उपाध्याय, विश्वनाथ. (2002). ऋग्वेद में राजनैतिक चिन्तन. दिल्ली: भारती प्रकाशन।
10. त्रिपाठी, डॉ. विमलानंद. (2005). भारतीय संविधान में वैदिक मूल्यों की उपस्थिति. इलाहाबाद: ज्ञानगंगा प्रकाशन।
11. वर्मा, भगवती चरण. (1998). प्राचीन भारतीय राज्य का स्वरूप. आगरा: साहित्य भवन।
12. अग्रवाल , वासुदेवशरण. (2020)पुनर्मुद्रित. कला और संस्कृति. दिल्ली: प्रभात प्रकाशन ।
13. शुक्ल, डॉ. योगेंद्रनाथ. (2014). वैदिक कालीन लोक कल्याणकारी राज्य. लखनऊ: हिंदी साहित्य परिषद्।
14. शुक्ल , हनुमान प्रसाद . (2023). राष्ट्र ,धर्म और संस्कृति. दिल्ली : प्रभात प्रकाशन ।
15. बासु, दुर्गादास . (2003). भारत का संविधान : एक परिचय . दिल्ली : लेक्सिस नेक्सिस ।